P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-9*(Part-1) May- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

नवीन सामाजिक संरचना के प्रबल हिमायती : निराला

अनुपमा सिंह
असिस्टेण्ट प्रोफेसेर,
हिन्दी विभाग,
के॰ बी॰ महिला महाविद्यालय,
हजारीबाग,
विनोबा भावे विश्वविद्यालय,
हजारीबाग,
झारखण्ड, भारत

सारांश

निराला अपनी रचना का प्रयोग समाज परिवर्तन के लिए हथियार की तरह करते हैं। वे मजदूरों और किसानों के बीच सक्रिय दिखाई देते हैं, उन्हें एक वस्तुपरक संघर्ष के लिए तैयार करतें हैं। निराला ने जीवन के बहुविध भूमिकाओं की समग्रता के अन्तरंग में प्रवेश कर जीवन तथा जगत के शाश्वत सत्य का उद्‌घाटन किया है। उनका स्वर मानवीय स्वर है, उनकी संवेदना मानवीय संवेदना है, उनका भावस्तर मानवीय भावस्तर है। निराला परम्परा के प्रति विद्रोही रूप में प्रसिद्ध हैं परन्तु वास्तविकता यह है कि उन्होंने परम्परा को नये अर्थ दिये हैं। नवीन के संस्पर्श से उसे प्राणवान बनाया है। निराला के पात्र जातिगत संकीर्णता, अंधविश्वास एवं धार्मिक रूढ़ियों से ऊपर उठकर उनके सपनों के समाज और राष्ट्र निर्माण में सक्रिय भूमिका निभाते हुए सच्चे मानव धर्म की प्रतिष्ठा करते हैं। तथा समाज को एक नये मूल्यबोध से प्रेरित करते हैं। निःसंदेह उनकी सबल सामाजिक चेतना गम्भीर अध्ययन का विषय है।

मुख्य शब्द : सामाजिक संरचना, मानवीय मूल्य, उदात्तचिन्तन, मूल्य बोध, उज्जवल भविष्य।

प्रस्तावना

निराला एक जागरुक जनवादी रचनाकार थे। उनकी रचनाएँ मेहनतकश जनता के सुख–दुःख, जीवन–संघर्ष, आशा–आकांक्षा एवं स्वप्नों से गहरा ताल्लुक रखती हैं। उनके साहित्य मे दलित, उपेक्षित, पीड़ित और शोषित जनों के हृदय के राग–उल्लास, निराशा और संत्रास भरे स्वप्न हैं। यही वह केन्द्रीय दृष्टि है जिसका आधार लेकर निराला ने अपने साहित्य का विषय बनाया। आजादी के पश्चात् देश के नये स्वप्नों का टूटना, पूँजीवाद का विकास, देश में आर्थिक संकट का गहराव और मोहभंग की स्थिति आदि ऐसे अनेक सूत्र हैं जो निराला के व्यक्तित्व एवं कृतित्व में घनिष्ठ रूप से सम्पृक्त हैं। निराला का अनुभव और विचार–जगत् इन्हीं तन्तुओं से बना है। निराला एक सामाजिक, सहृदय, कुशाग्रबुद्धि, परोपकारी और संवेदनशील रचनाकार थे। उन्होंने जो कुछ देखा, सुना, सहा, उसके बारे में सोचा, समझा, अपने ढंग से निष्कर्ष निकाला तथा भावलोक की सृष्टि कर दी। उनका यह भावलोक यद्यपि तरह–तरह की क्रीड़ाओं से युक्त है तथापि वह सामाजिक यथार्थ एवं जनजीवन के निरीह स्वप्नों, आकांक्षाओं से मिलता–जुलता है। इसका प्रमुख कारण यह है कि उनकी संवेदना और सहानुभूति उनका पक्ष लेती रही, जो पीड़ित हैं, शोषित हैं, अभावग्रस्त हैं। ऐसे लोगों के जीवन से, उनकी समस्याओं और संघर्षो से उनका सम्पर्क निरन्तर बना रहा। उनका साहित्य ऐसे लोगों की ही पुर्नरचना है। ऐसे लोगों की कल्पनाजीविता तथा रचनाशीलता के प्रतिविम्बन के रूप में इनके साहित्य में राजकुमारों और परियों की कहानियाँ भी हैं। उनमें चतुरी चमार और देवी सरीखे यथार्थ चरित्र हैं तो प्रभावती और निरुपमा जैसे आदर्श पात्र भी हैं। निराला के साहित्य में गरीब, दुःखी भारतीय जनता के दुःखों, संघर्षो, स्वप्नों और आकंक्षाओं को अभिव्यक्ति मिली है।[1] इस प्रकार निराला का रचना संसार दुःखी और दलित जनों का संसार है।

मनुष्य के कल्याण तथा उसके जीवन मूल्य को निरन्तर ऊँचाइयों पर ले जाने की सम्पूर्ण उज्ज्वल मानव प्रवृत्तियाँ जब समूहबद्ध होकर सामाजिक स्वरुप प्राप्त कर लेती हैं, तब वह सामाजिक जागरण ही उस समाज की समाजिक चेतना कहलाती है। यह सामाजिक चेतना ही वर्गहीन, शोषणविहीन और एक निरंतर विकसित सामाजिक संरचना का मूल आधार होती है। सामान्य आदमी का कल्याण इसका प्रथम लक्ष्य होता है। रचनाकार चाहता है कि जिस व्यवस्था में मनुष्य जीता और रहता है, उसमें भाईचारा हो, विकास की सम्भावनाएँ मौजूद हों, स्वार्थ, ईर्ष्या, द्वेष की प्रतियोगिताएं न हों, लगातार बेहतर भविष्य के

लिए उसकी शक्ति का उपयोग हो, परिस्थितियाँ प्रगतिशीलता को बाधित न करें, कुल मिलाकर वह शोषण विहीन हो। जब समाज उसके मन का नहीं होता तभी वह उस व्यवस्था का विरोध करता है।[2] निराला का रचना कार्य मानवता के प्रति आदरभाव और आत्मीयता की अबाध आस्था लेकर चलता है। वे सारी भ्रष्ट व्यवस्था को उलट–पलटकर मजदूरों और किसानों के सुखी वर्तमान का प्रयास करते हैं। सामाजिक यथार्थ के रचनाकर्मी अपने कृतित्व में अन्तर्निहित सोद्देश्यता को आधार बनाकर रचना जगत् में प्रवेश करते हैं। चेरवव, गोर्की, तालस्ताय, प्रेमचंद, निराला और मुक्तिबोध में यह उद्देश्य साफ नजर आता है। गोर्की तो अपने रचनाकर्म में निहित इस उद्देश्य को बकायदा स्वीकारते हैं। व्यक्तिगत रूप में मेरी यह राय है कि यथार्थवाद अपना कठिन कार्य पूरा कर सकता है, अगर वह व्यक्ति को सदियों पुराने कूपमंडूप तथा बहशियाना व्यक्तिवाद से समाजवाद की ओर ले जाने वाले रास्ते पर विकास की प्रक्रिया में देखे। मानव का चित्रण केवल वैसा न करे जैसा वह आज है बल्कि जैसा कि उसे होना चाहिए और जैसा कि वह कल होगा।[3] निराला इस आधार पर एक नये किसान और एक नये मजदूर की संरचना करते हैं।

निराला के प्रसिद्ध उपन्यास 'बिल्लेसुर बकरिहा' के मुख्य पात्र बिल्लेसुर साधारण व्यक्तित्व के हैं लेकिन उनका आचरण एवं श्रमसाध्य जीवन आकर्षण का केन्द्र है। बिल्लेसुर सत्तादीन के यहां बँधुआ मजदूर की तरह खटते हैं। गाँव लौटने पर बकरियाँ पालते हुए, शकरकन्द की खेती करते हुए, एक औसत भारतीय किसान की तरह जीवनयापन करते हैं। वे बकरी चराते हुए रास्ते में पड़ने वाले मंदिर में प्रतिदिन जाकर बकरी की रक्षा के लिए प्रार्थना करते हैं जब उनका एक बकरा मारा गया तो वे बहुत दुखी हुए और उनका ईश्वर पर से विश्वास डगमगा गया। वे पुनः उस मंदिर में गये और महावीर के सम्मुख खड़े होकर कहे, देख मैं गरीब हूँ। तुझे सब लोग गरीबों का सहायक कहते हैं। मैं इसीलिए तुम्हारे पास आता था और कहता था कि मेरी बकरियों और उनके बच्चों को देखते रहना। क्या तूने रखवाली की ? बता ! थूथन सा मुँह लिए खड़ा है। कोई उत्तर न मिलने पर बिल्लेसुर ने महावीर जी के मुँह पर वह डंडा दिया कि मिट्टी का मुँह गिल्ली की तरह टूटकर बीघे भर के फासले पर जा गिरा।[4] निराला ने बिल्लेसुर के चरित्र के माध्यम से अंधविश्वास की बजाय कर्म के महत्व को प्रमुखता दी है। महावीरजी पर बिल्लेसुर का प्रहार धार्मिक अंधविश्वास से मुक्ति का प्रयास है। लेनिन ने कहा था 'आधुनिक युग का वर्गचेतन मजदूर बड़े पैमाने के उद्योग द्वारा प्रशिक्षित तथा नागरिक जीवन द्वारा प्रबुद्ध होकर धार्मिक अंधविश्वास को घृणापूर्वक ठुकरा देता है।[5] बिल्लेसुर के चरित्रांकन द्वारा निराला इसी वर्गचेतन मजदूर को शक्ति प्रदान करते हैं। निराला ने बिल्लेसुर जैसे प्रगतिशील चरित्र के माध्यम से सामाजिक जागरूकता का आह्वान किया है। किसान मजदूर को संघर्ष के लिए तैयार करना, उन्हे बलवान बनाना, निराला की अन्तर्निहित इच्छा है। जनसामान्य के उज्ज्वल भविष्य की लड़ाई में उनकी सीधी हिस्सेदारी है। उनका यथार्थवादी साहित्य मनुष्य के मजबूरियों की कथा है। जीवन की तीखी पहचान है। साथ ही वह ग्रामीण परिवेश की सारी संवेदनाओ से सम्पृक्त है।

'कुल्लीभाट' में कुल्ली की सामाजिकता के लिए संघर्ष की भावना निराला को उद्वेलित करती है, इसीलिए गाँव समाज और आस–पास के क्षेत्रों से जाति बहिष्कृत कुल्ली की मृत्यु के पहले निराला उसकी प्राणरक्षा के प्रयास करते हैं और मृत्यु उपरान्त उसका विधिवत कृत्य सम्पन्न कराते हैं। पहले गाँव के जो लोग कुल्ली के परलोक बिगड़ने की बात करते है वही लोग श्राद्ध के बाद कहते हैं–'बन गयी कुल्ली की'। निराला कुल्ली के प्रति श्रद्धा, विश्वास और आदर प्रकट करके लांछित और उपेक्षित लोगों को नये समाज निर्माण के लिए प्रेरित करते हैं। निराला जी में बचपन से ही पाखण्डपूर्ण जीवन, जाति–पाँति एवं सामाजिक रूढ़ियों के प्रति विद्रोह की भावना थी जिसका उद्घाटन प्रसंगवश स्थान–स्थान पर प्रस्तुत उपन्यास में हुआ है। कुल्ली एक व्याभिचारी थे जो बाद में एक समाज सुधारक और राजनीति में सक्रिय कार्यकर्ता के रूप में हमारे सामने आते हैं। कुल्ली में वही साहस है जो सत्य के प्रति निष्ठा रखने के कारण व्यक्ति में आ जाता है, वह निर्भिकतापूर्वक अपनी बात कहता है तथा तीव्र स्वर में पाखंडियो को फटकारता है। डॉ. ओमप्रकाश भट्ट ने अपने शोध प्रबंध में लिखा है कि ''कुल्लीभाट में निराला अप्रतिम व्यंग्यकार और उत्कट साहसी लेखक के रूप में नजर आते हैं। उनकी यह रचना अपने मर्मभेदी व्यंग्य के कारण न केवल हिन्दी साहित्य में वरन् उनकी अन्य कृतियों 'देवी', 'चतुरी चमार' और 'बिल्लेसुर बकरिहा' में भी सर्वोपरि स्थान रखती है। इसका कारण है और वह यह है कि इसमें रूढ़ियें का उग्र विरोधी, सत्य पर से नकली कलई उतारने वाला, भीतर–बाहर से सपाट एक जैसा, खरी बात बिना हिचक कहने वाला, विद्रोही लेखक निराला स्वयं एक प्रधान पात्र बनकर आया है। यथार्थवादी लेखक के हाथ में व्यंग्य का दुधारी अस्त्र होता है, जिसके प्रयोग से वह अपना रास्ता साफ करता है, ताकि सत्य की निर्बाध प्रतिष्ठा हो सके। निराला ने भी अपने इस अस्त्र के प्रहार से अंधश्रद्धा की जड़ें हिलाई हैं और सड़ी–गली रूढ़ियों पर प्रबल आक्रमण किये हैं।[6] निराला ने 'कुल्लीभाट' के चरितनायक में एक गतिशील चरित्र की कल्पना की है जो आरम्भ में समाज की ह्रासोन्मुखी शक्तियों का प्रतीक है और अंत में जाकर प्रगतिशील शक्तियों का नियामक बन जाता है।

समकालीन कवि के रूप में निराला अपने समय की क्रूर सच्चाइयों को चुनौती के रूप में स्वीकार करते हैं। उनका रचनाकर्म सुविधावाद को ठुकराता है और जनसामान्य के लिए न्याय के संघर्ष में कठिन से कठिन कार्य करते हुए अपनी भूमिका का निर्वहन करता है। खोये हुए अधिकारों को वापस दिलाने के लिए संघर्षरत रहना तथा निराशा से जूझ रहे दलित वर्ग में उत्साह और नई ताकत जाग्रत करना निराला के यथार्थवादी लेखन का प्रमुख तत्व है। उनकी रचनाएं गहन चिन्तन के माध्यम से सामाजिक एवं व्यक्तिगत जीवन में मनुष्य के खिलाफ पनप रही विषाक्त स्थितियों का उद्घाटन करती हैं। ऐसा प्रतीत होता है मानो निराला सम्पूर्ण समाज व्यवस्था के स्वरूप में एक गुणात्मक परिवर्तन करने के उद्देश्य से

रचना–यात्रा करते हैं। उनके सारे रचना कर्म का मूल आधार मानवीय करुणा है जो समाज की विसंगतियों, जनसामान्य की कठिन परिस्थितियों के परिणामस्वरुप निराला को प्रतिकार के रूप में खड़ा करती है। परिणामस्वरुप उनकी रचनाएं उच्च मानवीय आदर्शो, उच्चतर मानवीय मूल्यों एवं सामाजिक चेतना के यथार्थबोध का लक्ष्य लेकर चलती हैं, जिनके कारण मानव मात्र के लिए वे और महत्वपूर्ण हो जाती हैं। निराला की रचना का केन्द्रवर्ती विन्दु मनुष्य है अतः मनुष्य से जुड़े संदर्भ निराला की चिन्तन–दृष्टि के प्रमुख लक्ष्य निरन्तर बने रहते हैं। निराला प्रत्यक्षतः किसी जीवनदर्शन अथवा राजनैतिक विचार पक्ष से नहीं जुड़े किन्तु श्रेष्ठ वामपंथी रचनाकार की तरह उनकी आवाज सताये हुए दलित लोगों के अधिकारों के लिए तेज सुनाई पड़ती है। कबीर और निराला अपने युग की वाम कविता के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। उनकी कविता का वामपक्ष उनके युग की सीमाओं को लांघकर सार्वकालिक हो गया है। कविता का वामपक्ष एक ऐसी साहसिक रचना प्रवृति है जो हर युग में और हर जगह अपनी चुनौती भरी अस्तित्व की विशष्टिता से जानी पहचानी जाती है। वाम कविता का अपना एक जोखिम है और निराला की रचना जोखिम और चुनौती की रचना है।[7]

निराला की सामाजिक चेतना और चिन्तन दृष्टि भारतीय चिन्तन पद्धति पर आधारित है। इसमें विवेकानंदी विचार–मंच नजर आता है। वे यथातथ्य प्रस्तुति के बारे में सजग हैं। 'यथार्थ की इतिहासमूलक पीठिका को जो विश्लेषित नहीं कर पाते उनके लिए यातना, संत्रास, घुटन, अनास्था, मृत्युभय और पराजय ही आज के यथार्थबोध देने वाले शब्द हैं। शब्द मोह ने बहुतों को यथार्थ से विमुख किया है।[8] कमलेश्वर का यह कथन कि ''अतीत और भविष्य से तटस्थ होने में यातना नहीं है। यातना तो अपने समय में यथार्थ के प्रति तटस्थ होने में है।[9] निराला यथार्थ प्रस्तुति के पक्षधर है, वे समाज को क्षति पहुँचाने वाली शक्तियों से सावधान करते हैं। निराला के काव्य सामर्थ्य का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि वे उपेक्षित जनों के साथ एक आत्मीय संवाद स्थापित करते हैं। इस संवाद के जरिये वे समाज के सामंती और पूँजीवादी चरित्र पर प्रहार करते हैं –

जल्द–जल्द पैर बढ़ाओ, आओ–आओ।
आज अमीरों की हवेली,
किसानों की होगी पाठशाला
धोबी, पासी, चमार, तेली
खोलेंगे अंधेरे का ताला
एक पाठ पढ़ेंगे, टाट बिछाओ।[10]

भारतीय नवउद्योगवादी सभ्यता और पूँजीवादी साम्राज्यवादी चिंतन दो अलग–अलग विचारों के संक्रान्तिकाल में निराला की ये रचनाएँ निश्चित ही दिशा–निर्देश करती हैं।

निराला के काव्यसंग्रह 'अनामिका' से यह निष्कर्षित होने लगता है कि बदलाव चाहने वाले निराला की प्रगतिवादी चेतना उन्हें झकझोरती है। अनामिका (द्वितीय) में निराला के उदात्तचिन्तन दृष्टि में शोषण से मुक्ति की क्रान्ति–चेतना की छटपटाहट है। कुकुरमुत्ता, बेला, नये पत्ते और अणिमा जो परवर्ती रचनाएं हैं वे युगीन यथार्थ की तस्वीर लेकर चलती हैं। निराला युगीन यथार्थ की विसंगतियों से जूझते हैं इसलिए वे एक प्रामाणिक क्रान्तिकारी विचारक के रूप में जनस्वीकृति प्राप्त करते हैं। जो व्यक्ति अपने युग के सामाजिक जीवन में पाये जाने वाले हर प्रकार के अत्याचार और अन्याय से घृणा करने में समर्थ होता है वह क्रान्तिकारी वर्ग का विचारक बन जाता है।[11] निराला की कविताओं और लेखन में चित्रित किसानों और मजदूरों के संघर्ष को, उनकी आत्मवृत्तियों को, उनकी आर्थिक स्थितियों को, उनकी सोच को पहचानने के लिए वस्तुपरक अध्ययन दृष्टि की आवश्यकता है। दलित और शोषित वर्ग का विचार पक्ष, सामाजिक जीवन के वस्तुपरक रवैये को स्पष्ट उजागर करता है–

मैंने देखा बड़ा मैला
मन उसका समाज से
चोट खाई वह रामजी के राज से,
शूद्रों को मिला नहीं
जिनसे कुछ भी कहीं'।[12]

'सरोज स्मृति' में बेटी की मृत्यु के लिए निराला सीधे समाज को जिम्मेदार ठहराते हैं। बेटी सरोज की उपचारहीन मृत्यु के पीछे जो सामाजिक, आर्थिक कारण हैं उन्हें निराला 'सरोज स्मृति' में प्रस्तुत करते हैं–

ये कान्यकुब्ज कुल कुलांगार
खाकर पत्तल में करें छेद,
इनके कर कन्या, अर्थ खेद।
इस विषम बेलि में विष ही फल,
यह दुग्ध मरुस्थल नहीं, सुजल।[13]

'सरोज स्मृति' में दर्शाया हुआ यही सामाजिक यथार्थ चिंतन 'राम की शक्तिपूजा' तक पहुँचते–पहुँचते अपनी साधनहीनता और जीवन में हुए अपने विरोध को खुलकर धिक्कारने लगता है।

अनामिका में संग्रहित 'दान' कविता में निराला समाज के पाखंड एवं अमानवीय पक्ष का उद्घाटन करते हैं। हिन्दू धर्म के ढकोसले, जहाँ बन्दरों को हनुमान का अवतार मानकर पूजा के साथ पूए खिलाये जाते हैं वहीं दीन, दलित, भूखे मनुष्य को राक्षस कहकर दुत्कारा जाता है इसको कवि ने प्रस्तुत कविता में वर्णित किया है –

झोली से पूए निकाल लिये
बढ़े कपियों के हाथ दिये।
देखा भी नहीं उधर फिरकर
जिस ओर रहा वह भिक्षु इतर
चिल्लाया, किया दूर दानव,
बोला मैं, धन्य श्रेष्ठ मानव।।[14]

भारतीय समाज के आर्थिक आधार की विकृतियों को भी निराला 'दान' कविता में स्पष्ट करते हुए लिखते हैं –

एक ओर पथ के नर, कृष्णकाय,
कंकाल शेष नर मृत्यु–प्राय,
बैठा सशरीर दैन्य दुर्बल,
भिक्षा को उठी दृष्टि निश्चल
अतिक्षीण कंठ है तीव्र श्वास
जीता ज्यों, जीवन से उदास।[15]

अनामिका में संग्रहीत 'वह तोड़ती पत्थर' में निराला ने पत्थर तोड़ने वाली मजदूर औरत के संघर्ष का वर्णन किया है –

चढ़ रही थी धूप, गर्मियों के दिन
दिवा का तमतमाया रूप।
उठी झुलसाती हुई लू
रूई ज्यों जलती हुई भू
गर्द चिनगी छा गई,
प्रातः हुई दुपहर,
वह तोड़ती पत्थर।[16]

अटट्ालिकाओं में रहने वाली और अट्टालिकायें बनाने वाली के बीच जो मूल फर्क है, कार्य और सोच के बीच जो अन्तर है उसे स्पष्ट करने के लिए ही निराला अट्टालिका के सामने ही पत्थर तोड़ने वाली के कार्य का वर्णन करते हैं। टूटते पत्थर हैं, लेकिन निशाना अट्टालिका है। पत्थर तोड़ती हुई गरीब स्त्री के हालत का जो वर्णन है वह समाज के आर्थिक अभाव का ढाँचा प्रस्तुत करता है। इसमें श्रम के महत्व में विश्वास की तीव्र आकांक्षा भी प्रस्तुत की गयी है। श्रम और समस्या के मिलन विन्दु पर निर्मित वातावरण कविता में नई आशा का संचार करता है, जिसमें अभावों से मुक्तिपाने की इच्छा तथा ऐश्वर्य के प्रति ईर्ष्यालु तितिक्षा भी मौजूद है।[17]

निष्कर्ष

निराला की प्रगतिवादी चेतना के मूल में जनशक्ति संवर्धन का भाव प्रमुख है। सामाजिक अन्याय, जातिगत द्वेष एवं संकीर्णता के कारण इस विशाल देश का विराट मानवसमूह एक सुनिश्चित षड्यंत्र के तहत मानवोचित जीवनयापन की सुविधाओं से वंचित है। निराला की यह सोच सही है कि इस अपार मानव समूह को अभाव के अंधकार से निकालना होगा। 'शक्ति की करो मौलिक कल्पना'का विस्तार निराला के साहित्य में ध्यातव्य है। निराला के प्रगतिशील विचार उनके वेदान्त ज्ञान से भी जुड़ते है–'ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं'। निराला–साहित्य में मुक्ति का आशय स्पष्ट है। इस शक्ति परिज्ञान का एक पक्ष जीर्ण–शीर्ण रूढ़ियों के प्रति विद्रोह भाव से भी जुड़ता है। फलतः निराला के पात्र जाति, वर्ण, धर्म के नाम पर प्रचलित संकीर्णता एवं कुंठित मनोवृत्तियों का विरोध करते हैं तथा एक नवीन समाज की संरचना में योगदान करते हैं। उनके पात्र जातिगत संकीर्णता, धार्मिक रूढ़ियों से ऊपर उठकर निराला के सपनों के समाज और राष्ट्र निर्माण में सक्रिय भूमिका निभाते हुए सच्चे मानव धर्म की प्रतिष्ठा करते हैं तथा समाज को नये मूल्यबोध से प्रेरित करते हैं ।

पाद टिप्पणी

1. *राजकुमार सैनी : साहित्य स्रष्टा निराला, पृ 10*
2. *कमला प्रसाद पाण्डेय : रास्ता इधर है, पृ. 107*
3. *मैक्सिम गोर्की : लेखन कला और रचना कौशल, पृ. 102*
4. *डॉ. निर्मल जिंदल : निराला का गद्य साहित्य, पृ. 100*
5. *लेनिन समाजवादी विचारधारा और संस्कृति, पृ. 65*
6. *प्रेम प्रकाश भट्ट : निराला का गद्य साहित्य, पृ. 56*
7. *मोहदत्त : मार्क्सवादी सौन्दर्य शास्त्र, पृ. 138*
8. *कमलेश्वर : नई कहानी की भूमिका, पृ. 146*
9. *कमलेश्वर : नई कहानी की भूमिका, पृ. 154*
10. *निराला : बेला पृ. 70*
11. *नवल किशोर : मानववाद और साहित्य, पृ. 19*
12. *निराला : नये पत्ते, पृ. 55*
13. *निराला : अनामिका पृ. 129–130*
14. *निराला वही पृ. 25*
15. *निराला वही पृ. 24*
16. *निराला वही पृ. 80*
17. *रमेशचन्द्र मेहरा : निराला का परवर्ती काव्य, पृ. 130*